RESEARCH COMMUNICATIONS
(An International Open Access, Peer Reviewed, Multidisciplinary Online Journal)
https://research-communications.cmpcollege.ac.in/
ISSN: Under Process
Vol.: 1, Issue: 1, January-June 2023, pp.50-58

भारत में एक राष्ट्र और एक चुनाव का कानूनी परिप्रेक्ष्य: एक विधि शास्त्रीय विश्लेषण

रमेश कुमार भारती
असिस्टेंट प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ़ लॉ
सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज, यूनिवर्सिटी ऑफ़ इलाहाबाद
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।
ईमेल–rkbharticmplaw@gmail.com

सारांश

भारत दुनिया के उन चुनिंदा देशों में शामिल है जहाँ पर सांविधानिक दृष्टि से तीन-तीन तरह के चुनाव होते हैं। सामान्यतः एकात्मक राज्यों में एक स्तर चुनाव होता है और परिसंघात्मक राज्यों में दो स्तर के चुनाव होते हैं। तीसरे स्तर का चुनाव इन दोनों तरह के देशों में होते हैं लेकिन इसका जिक्र वहां के केंद्रीय संविधान में नहीं है। भारत ऐसा अकेला देश है जहाँ के संविधान में पंचायत या लोकल बॉडीज के चुनाव से सम्बंधित प्रावधान भी स्पष्ट रूप से किया गया हो। हमारे देश में तीन तरह के चुनाव होते हैं जिसमे केंद्र, राज्य और लोकल बॉडी के चुनाव शामिल हैं। इन तीनो स्तर के चुनाओं में प्रथम स्तर अर्थात केंद्रीय चुनाव के द्वारा राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, लोकसभा और राज्य सभा का चुनाव होता है। द्वितीय स्तर अर्थात राज्य स्तर पर विधानसभा और विधान परिषद् का चुनाव होता है। तृतीय स्तर अर्थात लोकल बॉडीज के अंतर्गत पंचायत और नगर निगम के चुनाव कराये जाते हैं।

मुख्य शब्द: चुनाव, राष्ट्र, संविधान, लोकतंत्र, कानून, संघवाद, लोक-सभा, विधान-सभा।

प्रस्तावना

"चुनाव लोकतंत्र की धड़कन हैं। यदि वे बहुत जल्दी-जल्दी होते हैं या बहुत देर में होते हैं, तो दोनों ही खतरे का संकेत हैं।" – प्रख्यात विधिवेत्ता नानी पालकीवाला। भारत विविधताओं का देश है और विश्व में लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनाने वाले देशों में सबसे बड़ा है। चुनाव किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की जीवनधारा या रीढ़ होता है। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की सफलता वहां के निष्पक्ष चुनाव पर निर्भर होती है। लोकतंत्र को स्वीकार करने वाली जनता के लिए चुनाव एक उत्सव की तरह होता है जिसे वे बड़े उत्साह और धूम-धाम से मनाते हैं। ऐसे लोकतांत्रिक उत्सव के माध्यम से वहां की जनता अपनी मनपसंद सरकार का गठन करती है। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जब चुनाव होता है तो वहाँ के मतदाता जिसे सत्ता प्रदान करते हैं उसे प्रसिद्ध विधि शास्त्री ह्यूगोग्रोशियस द्वारा दिये गये "सामजिक संविदा के सिद्धांत" के अंतर्गत किये गये संविदा की शर्तों का स्मरण दिलाते हैं। जब जनता नई सरकार चुनती है तो उसके माध्यम से राज्य को यह याद दिलाती है कि हमने आपको

सरकार इसलिए बनाया है ताकि आप हमारे अधिकारों की रक्षा करें और हमें गरिमामय जीवन जीने के लिए मूलभूत सुविधाएँ उपलब्ध करायें। अर्थात चुनाव बहुत ही महत्वपूर्ण और संवेदनशील मुद्दा है जिसे किसी भी दशा में दोयम दर्जे का महत्व नहीं दिया जा सकता।

यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना समीचीन होगा कि राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, राज्यसभा और विधान परिषद् के चुनाव में जनता प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं लेती है। अर्थात जनता सिर्फ तीन चुनाओं में ही सीधे प्रतिभाग करती है जिसमे लोकसभा, राज्यसभा और पंचायत अथवा नगर निगम के चुनाव शामिल हैं। एक चुनाव का तात्पर्य सिर्फ यह नहीं है लोकसभा और विधानसभा का चुनाव एक साथ हो बल्कि इसका भाव यह भी है कि देश में एक ही मतदाता सूची भी तैयार की जाये और उसी के अनुसार सभी चुनाव कराये जायें।

एक साथ चुनाव के पक्ष में इस प्रकार के तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं -

बार-बार चुनाव से शासन में समस्या- 2017 में नीति आयोग के सदस्य और आर्थिक सलाहकार डॉक्टर बिबेक देबरॉय ने एक लेख में बताया कि पिछले तीस सालों में ऐसा कोई एक साल भी नहीं गुजरा जिसमे कोई चुनाव न हुआ हो, अर्थात भारत के किसी न किसी राज्य में हर साल चुनाव होते रहते हैं, कई बार तो एक साथ कई-कई राज्यों में एक साथ चुनाव चल रहे होते हैं। इस वजह से सरकार हमेशा चुनावी प्रक्रिया में रहती है जिसकी वजह से कई दिक्कते आती हैं। जिस भी राज्य में चुनाव की घोषणा होती है वहां पर एक आदर्श चुनाव संहिता लागू हो जाती है। ऐसी चुनाव संहिता लागू होने से सरकारों, राजनैतिक पार्टियों, अधिकारीयों - कर्मचारियों, उम्मीदवारों तथा मीडिया आदि के कार्यों पर विभिन्न प्रकार की पाबंदियां लग जाती हैं जैसे सरकार इस समय कोई नई उद्घोषणा नहीं कर सकती, नये विकास के कार्य प्रारम्भ नहीं कर सकती। अर्थात इस तरह से बार - बार चुनाव होने से नीति निर्माता प्रक्रिया को लकवा मार जाता है। अतः नीतियां बनाने या लागू करने में बहुत लेट - लतीफी होती है। इस कारण से सरकारें दीर्घकालिक योजनाओं का निर्माण न करके छोटी छोटी योजनाएं बनाती हैं और चुनावी घोषणा के रूप में प्रस्तुत कर उसे पूरा करने के ही दबाव में रहकर अपना कार्यकाल समाप्त कर लेती हैं। एक महत्वपूर्ण समस्या आती है जो कि कर्मचारियों से सम्बंधित होती है। चुनाव आयोग के पास अपने इतने कर्मचारी नहीं होते है कि चुनावी प्रक्रिया स्वतः पूरी करवा लें। चुनाव आयोग के डाटा के अनुसार जब भी लोक सभा का चुनाव होता है तो देश में लगभग नौ से दस लाख मतदान केंद्र बनते हैं जिनमे मतदान अधिकारी, पर्यवेक्षक, सुरक्षा आदि में लगभग एक करोड़ सरकारी स्टाफ की ड्यूटी लगाईं जाती है। ऐसे कर्मचारी जब इलेक्शन ड्यूटी करते हैं तो उनके सामान्य या नियमित कार्य बाधित होते हैं। चूँकि ये सभी अधिकारी-कर्मचारी अपना मूल कार्य छोड़कर चुनाव ड्यूटी करते हैं अतः इनके मूल कार्यों पर दुष्प्रभाव पड़ता है। यदि देश में पांच साल में एक बार में ही लोक सभा और विधान सभा का चुनाव एक साथ करा लिया जाये तो उक्त दुष्प्रभाव को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

बार-बार चुनाव से वित्तीय समस्या - चुनाव में सरकार,राजनैतिक दलों व उम्मीदवारों को काफी मात्रा में धनराशि खर्च करनी पड़ती है, इसकी वजह से राज्य वित्तीय संकटों का सामना करता है।यहाँ यदि सरकारी खर्च पर बात किया जाये तो पिछले दो लोकसभा चुनाओं, 2014 और 2019 के चुनाव के खर्च

पर चुनाव आयोग द्वारा जारी आकड़ों पर दृष्टिपात करना समीचीन होगा। 2014 के लोकसभा चुनाव में 3870 हजार करोड़ रुपये खर्च हुये। आयोग ने यह भी बताया कि एक राज्य के विधानसभा चुनाव में लगभग 200 से 300 हजार करोड़ रुपये खर्च होते हैं अर्थात सिर्फ सभी राज्यों के एक बार के चुनाव में 6 हजार से 9 हजार करोड़ रुपये खर्च हो जाते हैं। चुनाव आयोग ने यह भी कहा कि यदि दोनों चुनाव एक साथ कराये जायें तो 4500 सौ करोड़ रुपये में चुनाव संपन्न कराया जा सकता है अर्थात उक्त खर्च को एक चौथाई किया जा सकता है। पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त यस. वाई. कुरैशी के अनुसार 2019 के लोकसभा चुनाव और चार राज्यों के चुनाव में सरकार के लगभग दस हजार करोड़ रुपये खर्च हुये। यदि इसमें उम्मीदवारों के भी खर्च जोड़ें तो लगभग साठ हजार करोड़ रुपये खर्च हुये। इन अनुमानों के अनुसार यदि एक साथ चुनाव करवाया जाये तो सरकार और राजनैतिक पार्टियों का लगभग एक लाख करोड़ रुपये हर पांच साल पर बचाया जा सकता है।

बार-बार चुनाव से भ्रष्टाचार- भारत देश में चूँकि चुनाव बार-बार आते हैं अतः राजनैतिक पार्टियों को ज्यादा से ज्यादा फंड चाहिए होता है। ये फंड बड़े-बड़े उद्योगपति देते हैं लेकिन इस तरह से फंडिंग करने वाले पूँजीपति इस शर्त पर ही फंडिंग करते हैं कि सत्ता में आने पर वह राजनीतिक पार्टी उसके अनुसार नीतियां बनायेंगी। ऐसी स्थिति को ही क्रोनी पूंजीवाद कहा जाता है। इस तरह से यह कहा जा सकता है कि भ्रष्टाचार की जड़ में चुनाव है क्योंकि यदि राजनैतिक दलों को चुनाव के खर्च के लिए पूंजीपतियों से धन की मांग न करनी पड़े तो सरकारें ऐसे पूंजीपतियों के दबाव में कार्य नहीं करेंगी।

बार-बार चुनाव से सामाजिक सौहार्द पर दुष्प्रभाव - बार-बार चुनाव होने से सबसे बड़ा नुकशान सामाजिक ताने-बाने को होता है। चुनाव के दौरान जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद, सम्प्रदायवाद चरम पर होता है, देश की जनता इन मुद्दों पर लड़ती और मरती है, लोगों में आपस में दुश्मनी हो जाती है। यदि देश में पांच साल में एक बार ही चुनाव हों तो ये समस्याएँ भी काफी हद तक कम हो जायेंगी।

इसी तरह से अन्य कई समस्यायें जैसे बार-बार मतदान केंद्रों को बनाना, ई.वी.एम. मशीनों की व्यवस्था करना, सुरक्षकर्मियों की तैनाती करनाआदि से सम्बंधित कार्य पांच साल में सिर्फ एक बार ही करना पड़ेगा। बार-बार चुनाव की वजह से जनता पर एक बहुत बड़ा नकारात्मक प्रभाव यह पड़ता है कि उसमे मतदान करने का उत्साह कम हो जाता है। जबकि एक सफल लोकतंत्र में ज्यादा से ज्यादा मतदाताओं का प्रतिभाग करना ही उसे सशक्त, सहभागितामूलक लोकतंत्र बनाता है।

अंतर्राष्ट्रीयपरिप्रेक्ष्य

अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में जब हम बात करेंगे तो स्वाभाविक रूप से ऐसे देशों की चर्चा करेंगे जहाँ की लोकतंत्रात्मक व्यवस्था हमारे देश से मज़बूत हो और भारत का संविधान बनाते समय हमने जहाँ-जहाँ के संविधान का सहारा लिया था। इस तरह के देशों में अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जापान, आस्ट्रेलिया, आयरलैंड, कनाडा, जर्मनी आदि शामिल हैं।

अमेरिका की चुनाव प्रणाली

अमेरिका में राष्ट्रपतीय या अध्यक्षीय व्यवस्था लागू है अर्थात जो व्यक्ति सरकार का मुखिया होता है वही राष्ट्र का भी मुखिया होता है। यहाँ संघीय व्यवस्था लागू है, अर्थात केंद्र और राज्य की शक्तियाँ

एकदम स्पष्ट रूप से अलग हैं। सभी राज्यों का अपना अलग - अलग संविधान है, केवल कुछ ही मामलों में केंद्रीय सरकार की भूमिका होती है। यहाँ पर भी कई तरह के चुनाव होते हैं जैसे केंद्रीय चुनाव, राज्य के चुनाव, स्थानीय चुनाव और अन्य चुनाव। केंद्र के अंतर्गत चार तरह राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, हाउस ऑफ़ रिप्रेजेन्टेटिव और सीनेट के चुनाव होते हैं। ये चारो चुनाव प्रत्यक्ष होते हैं अर्थात जनता सीधे मतदान करती है। राज्य स्तर पर भी गवर्नर और दोनों सदनों का चुनाव होता है। लोकल स्तर पर म्युनिसिपेलिटी और कुछ बोर्ड्स के चुनाव होते हैं। अन्य चुनाव के अंतर्गत कुछ मुद्दों पर जनमत संग्रह आदि आते हैं।

अमेरिका में नवम्बर माह के पहले सोमवार के बाद वाले मंगलवार को अर्थात दो से आठ नवम्बर के मध्य राष्ट्रीय चुनाव दिवस मनाया जाता है, यह भी हर साल न मनाकर एक साल के अंतराल पर हर दूसरे साल मनाया जाता है। इसमें भी ध्यान देने वाली बात यह है कि ऐसा साल सम संख्या वाला होता है और हर ऐसा साल जिसमे चार से भाग होता है उसमे राष्ट्रपति चुनाव होता है। यह भी ध्यातव्य है कि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का कार्यकाल चार साल का होता है, हाउस ऑफ़ रिप्रेजेन्टेटिव के सदस्यों का कार्यकाल दो वर्ष का तथा सीनेट के सदस्यों का कार्यकाल छः साल का होता है। सीनेट के एक तिहाई सदस्यों का कार्यकाल हर छः साल पर पूरा होता रहता है अर्थात हर दूसरे साल सीनेट के एक तिहाई सदस्यों का चुनाव होता है। इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि अमेरिका में केंद्रीय स्तर पर हर दो साल पर चुनाव होते हैं जो एक ही दिन में सम्पन्न होते हैं। यहाँ पर राज्य अपने गवर्नर का चुनाव भी केंद्र के राष्ट्रपति के चुनाव के साथ कर लेते हैं। यहाँ पर लोकल स्तर के चुनाव और अन्य चुनाव भी राष्ट्रीय चुनाव दिवस के दिन ही कराये जाते हैं।

यूनाइटेड किंगडम की चुनाव प्रणाली

यूनाइटेड किंगडम एक एकात्मक राज्य वाली व्यवस्था को अपनाया है। इसका तात्पर्य यह है कि यहाँ पर सभी शक्तियां केंद्र के पास होती हैं। राज्यों के पास उतनी ही शक्तियां होती हैं जितनी केंद्र उन्हें सौंपती है। यहाँ पर संसदीय लोकतंत्र की व्यवस्था अपनाई गयी है। केंद्रीय स्तर पर सर्वोच्च पद क्राउन का होता है जो कि राष्ट्राध्यक्ष होता है। वहां की संसद को हाउस ऑफ़ कॉमन्स कहा जाता है जिसके सदस्यों का चुनाव हर पाँच साल पर होता है। हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स के सदस्यों की नियुक्ति सरकार के द्वारा की जाती है, इनका चुनाव नहीं होता। इंग्लैंड में केंद्रीय स्तर पर सिर्फ एक चुनाव होता है। इंग्लैंड के तीन राज्यों नार्थ आयरलैंड, वेल्स और स्कॉटलैंड में डिवॉल्वड असेंबली का चुनाव होता है जिसका कार्यकाल चार साल का होता है। नगर निगम के चुनाव पूरे इंग्लैण्ड में प्रत्यक्ष रूप से होते हैं जिसका कार्यकाल सामान्यतः चार साल का होता है। अन्य चुनाव के अंतर्गत जनमत संग्रह आदि आते हैं। यहाँ पर हाउस ऑफ़ कॉमन्स के चुनाव को छोड़कर बाकी सभी चुनाव के लिए प्रत्येक वर्ष मई महीने के प्रथम बृहस्पतिवार का दिन तय कर दिया गया है। इस दिन को यहाँ पर सुपर थर्सडे के नाम से जाना जाता है। हाउस ऑफ़ कॉमन्स के चुनाव के लिए भी यह व्यवस्था है कि इसकी पहली बैठक के पाँच साल बाद पड़ने वाले मई के प्रथम बृहस्पतिवार को होगा। यहाँ पर सन 2011 में फिक्स्ड टर्म पार्लियामेंट एक्ट पारित करके यह व्यवस्था किया गया कि आपवादिक स्थिति को छोड़कर हाउस ऑफ़ कॉमन्स के चुनाव पाँच साल पर ही मई के पहले बृहस्पतिवार को होंगे। निष्कर्ष यह है कि यूनाइटेड किंगडम में चुनाव एक

दिन ही होते हैं।

भारत में चुनाव प्रलाणी- भारत में सन 1947 में संविधान सभा के द्वारा एक अंतरिम सरकार का गठन किया गया, जिसका कार्यकाल 1951 तक रहा। इस देश में पहली बार अक्टूबर 1951 से फरवरी 1952 तक लोकसभा और विधानसभा का चुनाव हुआ। चूँकि विधानसभा के सदस्य राज्यसभा के चुनाव में मतदान करते हैं इसलिए मार्च 1952 में राज्यसभा का चुनाव हुआ और 3 अप्रैल 1952 को पहली बार राज्यसभा की बैठक हुई। भारत के राष्ट्रपति के चुनाव में लोकसभा, राज्यसभा और विधानसभा के निर्वाचित सदस्य मतदान करते हैं इसलिए यह चुनाव बाद में 3 मई 1952 को हुआ। उपराष्ट्रपति का चुनाव, जिसमे राज्यसभा और लोकसभा के सदस्यों को मतदान करना होता है 12 मई 1952 को हुआ। इसके बाद से भारत के संविधान के अनुच्छेद 83 और 172 में बताये गए कार्यकाल के अनुसार प्रत्येक पाँच वर्ष पर अर्थात 1957, 1962 और 1967 में लोकसभा और विधानसभा के चुनाव के साथ-साथ राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव हुये। चार बार नियमित और समय पर चुनाव होने के बाद 1967 से परिस्थिति यां बदलनी शुरू हो गई। 1967 में चुने गए राष्ट्रपति जाकिर हुसैन की सन 1969 में मृत्यु हो जाने से राष्ट्रपति के चुनाव के समय में परिवर्तन करना पड़ा। 1969 में ऍफ़ ए अहमद राष्ट्रपति चुने गये जिनकीमृत्यु 1977 में हो गयी। जुलाई 1977 में नीलम संजीव रेड्डी राष्ट्रपति चुने गये और तब से आज तक सभी राष्ट्रपति अपना कार्यकाल पूर्ण किये और प्रत्येक पाँच वर्ष पर नियमित रूप से राष्ट्रपति चुनाव हो रहे हैं। इसी तरह से उपराष्ट्रपति के चुनाव में थोड़ा समय परिवर्तन दो उपराष्ट्रपतियों (वी.वी.गिरी और आर. वेंकटरमन) के इस्तीफे की वजह से परिवर्तित हुये।

लोकसभा के चुनाव नियमित रूप से प्रत्येक पाँच वर्ष पर होना चाहिए लेकिन कई बार लोकसभा के कार्यकाल में व्यवधान भी आ जाते हैं जिसके कुछ प्रमुख कारणों में अविश्वास प्रस्ताव, दल-बदल के कारण बहुमत का अभाव, प्रधानमंत्री की स्वयं की इच्छा से जल्दी चुनाव, लोकसभा के कार्यकाल में वृद्धि और प्रधानमंत्री की हत्या जैसे कारण शामिल हैं। इन सभी कारणों का मिला जुला प्रभाव लोकसभा के 1967 से 1999 तक के चुनाओं में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इसी तरह से विधानसभाओं के कार्यकाल में परिवर्तन के प्रमुख कारणों में मुख्यमंत्री की इच्छा, दलबदल के कारण बहुमत का अभाव, केंद्र सरकार द्वारा अनुच्छेद 356 का प्रयोग (1977 में जनता पार्टी द्वारा नौ राज्यों में आपातकाल की घोषणा और 1980 में कांग्रेस द्वारा नौ राज्यों में आपातकाल की घोषणा इसके सबसे बड़े उदाहरण) हैं। इस समस्या को कम करने के लिए 1985 में राजीव गांधी ने संविधान में 52वां संशोधन करवाया और दलबदल विरोधी कानून बनाया और संविधान में दसवीं अनुसूची जोड़ दिया जिससे दलबदल की समस्या थोड़ी कम हुई। केंद्र सरकार द्वारा अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग करने पर सन 1994 में सुप्रीम कोर्ट के समक्ष यस आर बोम्मई बनाम भारत संघ नामक एक महत्वपूर्णवाद प्रस्तुत किया गया। नौ सदस्यीय इस पीठ के द्वारा दिए गये इस निर्णय के बाद अब अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग करना बहुत मुश्किल कार्य हो गया हैं। 2003 में दलबदल कानून को और सख्त किया गया। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप अब राज्य सरकारें सामान्यतः अपना कार्यकाल पूर्ण कर ले रही हैं जब तक कि बहुमत का अभाव न हो।

एक साथ चुनावों की मांग का इतिहास- 1967 से 1999 के दौरान चुनाव की सारी व्यवस्थाएं छिन्न-भिन्न हुईं। सबसे पहले 1982 में चुनाव आयोग ने यह सुझाव दिया कि चुनाव एक साथ होना चाहिए और इसके लिए संविधान में व्यवस्था होना चाहिए। 1999 में भारत के विधि आयोग ने अपनी १७०वीं रिपोर्ट में सलाह दिया कि लोकसभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ होने चाहिए लेकिन ऐसा एकाएक करना संभव नहीं हैं, इसका

प्रयास धीरे-धीरे किया जाना चाहिए। 2003 में तत्कालीन गृहमंत्री लालकृष्ण आडवाणी ने कहा कि हम इस प्रस्ताव को सभी पार्टियों की सहमति के लिए लायेंगे ताकि चुनाव एक साथ कराये जा सकें, लेकिन कांग्रेस ने इसका विरोध किया। इसके बाद 2015 में संसदीय समिति ने भी यह सलाह दिया कि हमें एक साथ चुनाव पर विचार करना चाहिए। 2017 में नीति आयोग ने एक साथ चुनाव पर एक शोध पत्र प्रस्तुत किया जिसमे यह बताया कि हम एक साथ चुनाव कैसे करवा सकते हैं। 2018 में विधि आयोग ने एक ड्रॉफ्ट रिपोर्ट प्रस्तुत किया जिसमे उन सभी सम्भावनाओं और विकल्पों की चर्चा किया जिनके आधार पर एक साथ चुनाव हो सकते हैं। ध्यातव्य तथ्य है कि भारतीय जनता पार्टी ने अपने 2014 और 2019 के चुनावी घोषणा-पत्र में भी एक साथ चुनाव कराने की अपनी मंशा को स्थान दिया हैं। 2019 में सभी राजनैतिक दलों के सामूहिक बैठक में वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने सभी दलों के समक्ष यह प्रस्ताव रखा। 2020 में चुनाव आयोग ने यह कहा कि हम एक साथ चुनाव कराने के लिए तैयार हैं।

एक साथ चुनावों से जुड़ी समस्यायें

एक साथ चुनाव होने से किन व्यवधानों या समस्याओं का आना संभावित हो सकता है, इस पर भी विचार करना समीचीन होगा। सर्वप्रथम यहाँ की जनता यह कह सकती है कि हमारे संविधान में ऐसा प्रावधान नहीं है। दूसरी संभावना यह बनती है कि इतनी ज्यादा संख्या में ई.वी.एम. मशीनें और स्टाफ़ कैसे उपलब्ध हो पायेगा। ये दोनों समस्यायें संभावना के आधार पर बताई जाती है जिसका निस्तारण संविधान संशोधन करके और चुनाव को कई चरणों में करके किया जा सकता है। पूर्वचुनाव आयुक्त यस.वाई.कुरैशी ने कहा कि बार-बार चुनाव होने से एक लाभ भी है, वो यह है कि जब नेताओं को यह पता होता है कि हमें बार-बार जनता के सामने वोट मांगने जाना है तो वे ज्यादा जिम्मेदारी से कार्य करते हैं। इन की इस बात से पूरी तरह सहमत नहीं हुआ जा सकता क्योकि हमारे संविधान में नेताओं को जिम्मेदार और उत्तरदाई बनाने के लिए कई प्रावधान किये गए हैं। तीसरी चिंता यह है कि एक साथ चुनाव होने से हमारी संघीय व्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा क्योंकि ऐसा होने से राष्ट्रीय मुद्दे स्थानीय मुद्दों पर भारी पड़ेंगे। एक साथ चुनाव होने से एक केंद्रीय नेता का महत्व बढ़ता जायेगा अर्थात हम संघीय व्यवस्था से एकात्मक व्यवस्था या राष्ट्रपतीय व्यवस्था की ओर बढ़ने लगेंगे। क्षेत्रीय दलों को भारी नुकसान होगा, उनका महत्त्व कम होगा। केंद्रीय चुनाव आयोग की शक्ति बढ़ेगी और राज्य चुनाव आयोग की शक्तियां घटेंगी अर्थात राज्य कमजोर होंगे और केंद्र मज़बूत होगा। ऐसा होना हमारे संघीय व्यवस्था के खतरा बनेगें जो हमारी संविधान की मूलभावना के विपरीत होगा। ऐसा इतिहास रहा है कि जब-जब भी केंद्र में कोई नेता ज्यादा प्रभावी हुआ तब-तब विधानसभा के चुनावों पर उसका प्रभाव पड़ा है इससे स्थानीय दलों और नेताओं की मुश्किलें बढ़ती हैं। इसका स्पष्ट उदाहरण जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी और नरेंद्र मोदी के कार्यकाल हैं। अक्सर यह देखा जाता है कि जब भी केंद्र और राज्य के चुनाव एक साथ में होते हैं तो जिस पार्टी को केंद्र में सत्ता प्राप्त होती है, राज्यों में भी उसी पार्टी की सरकार बनती है।

हमारे देश में उक्त तथ्यों के विरुद्ध भी तथ्य मौजूद हैं। केंद्रीय स्तर पर ऐसे प्रभावी, सर्वमान्य नेता की संख्या बहुत कम होती है जिनका प्रभाव राज्य की विधानसभा चुनावों पर पड़ता है। अतः यह भय अस्थायी प्रकृति का है। दूसरा विरोधाभाषी उदाहरण, केंद्र में कांग्रेस की सरकार थी, 2014 के लोकसभा

चुनाव से पहले राजस्थान, छत्तीसगढ़ और मध्यप्रदेश का विधानसभा चुनाव हुआ और तीनो जगह बीजेपी की सरकार बनी, पुनः 2019 के लोकसभा चुनाव से पहले बिहार सहित उक्त तीनो राज्यों में विधानसभा चुनाव हुये जहाँ पर बीजेपी की हार हुई जबकि केंद्र में उसी की सरकार थी। लेकिन जब कुछ ही दिनों बाद लोकसभा का चुनाव हुआ तो इन्ही राज्यों में ज्यादातर सीटों पर बीजेपी की जीत हुई। उड़ीसा और आंध्रप्रदेश के चुनाव ऐसे भी उदाहरण हैं जो यह बताते हैं कि चाहे केंद्र के साथ चुनाव हो, चाहे केंद्र में कितना भी प्रभावी नेता क्यों न हो, यदि स्थानीय पार्टी और नेता में गुणवत्ता, अच्छी छवि है तो चुनावी परिणाम चौकाने वाले होते हैं। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि आज के समय में भारत की जनता यह समझती है कि लोकसभा के चुनाव का क्या महत्त्व है इसमें किस पार्टी को समर्थन देना है और विधानसभा के चुनाव का क्या महत्त्व है, इसमें किस पार्टी को सत्ता सौंपनी है। उस पर किसी पार्टी की सत्ता या लहर का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात एक साथ चुनाव कराये जाने पर भी वह विधानसभा और लोकसभा के उम्मीदवारों के साथ अलग-अलग तरह का निर्णय ले सकती है।

संभावित विकल्प-प्रथम विकल्प यह है कि हम कोई परिवर्तन न करें, जैसा चल रहा है वैसे ही चलने दें। दूसरा विकल्प यह है कि प्रत्येक पाँच वर्ष पर लोकसभा, विधानसभा और लोकल बॉडीज के चुनाव एक साथ करवायें। तीसरा विकल्प यह हो सकता है कि लोकसभा का चुनाव अलग और विधानसभा व लोकलबॉडीज के चुनाव एक साथ कराये जा सकते हैं अर्थात पाँच साल में दो बार चुनाव हो सकते हैं। चौथा विकल्प यह हो सकता है कि लोकसभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ और लोकल बॉडीज के चुनाव एक बार में हो जायें। पाँचवा विकल्प यह हो सकता है कि प्रत्येक ढाई वर्ष पर चुनाव का प्रावधान कर दिया जाये जहाँ पर भी जो भी सीटें रिक्त हों उन पर एक तिथि पर चुनाव हो जाये। छठवाँ और सबसे अलग विकल्प यह हो सकता है कि इंग्लैण्ड की तरह कोई एक तिथि चुनाव दिवस के रूप में घोषित कर दी जाये और प्रत्येक वर्ष उसी माह में वे सभी चुनाव हों जो उस एक साल के अंदर होने थे। यह कार्य सभी राजनैतिक दलों को विश्वाश में लेकर उनकी सहमति से धीरे-धीरे किया जा सकता है। इन सभी विकल्पों में सबसे बेहतर विकल्प कौन हो सकता है यह व्यवहारिकता पर निर्भर करता है। सुविधा की दृष्टि से पहले वार्षिक चुनाव करके कुछ विधानसभाओं के कार्यकाल घटाकर या बढ़ाकर नियमित स्थिति लाया जा सकता है इसके बाद विधानसभा और लोकल बॉडीज का चुनाव साथ में कराया जा सकताहै, इसी प्रकार से कुछ सालों में ऐसी स्थिति बनाई जा सकती है जब सभी तरह के चुनाव एक साथ कराये जा सकेंगे। मुश्किल है पर नामुमकिन नहीं है।

संविधान व कानूनों में संभावित संशोधन

भारत के संविधान के अनुच्छेद 85 और 174 में क्रमशः राष्ट्रपति और राज्यपाल को लोकसभा व विधानसभा विघटित करने की शक्ति दी गयी है जिसके द्वारा प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री की सलाह पर लोकसभा या विधानसभा को विघटित किया जा सकता है। एक साथ चुनाव कराने के लिए इस प्रावधान को थोड़ा शिथिल करके दो तिहाई बहुमत से विशेष क़ानून पारित करके लोकसभा या विधानसभा को समय से पहले भंग किया जा सकता है। ऐसा करने से यह लाभ होगा कि केवल प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री की इच्छा पर लोकसभा या विधानसभा भंग नहीं हो पायेगी और उनका कार्यकाल पाँच साल के लिए लगभग तय हो जायेगा। संविधान के

अनुच्छेद 83 और 172 में प्रावधानित है कि सामान्यतः लोकसभा और विधानसभा का कार्यकाल पाँच वर्ष का होगा जब तक कि उसे बीच में ही भंग न कर दिया जाये। यदि किसी लोकसभा या विधानसभा का पाँच वर्ष से पहले विखंडन होता है तो पुनः चुनावोपरांत नई विधानसभा या लोकसभा के गठन के कारण नियमित क्रम में व्यवधान होता है। इस समस्या का निवारण उस नियम को लागू करके किया जा सकता है जैसा प्रावधान नगर निगम या पंचायत के कार्यकाल से सम्बंधित अनुच्छेद 243 (E) और 243 (U) में किया गया है अर्थात यदि पाँच वर्ष से पहले कहीं पर चुनाव होता है तो नई सरकार का कार्यकाल सिर्फ बची हुई अवधि तक ही होगा। लोकसभा बिजिनेस रूल्स के नियम 198 में यह प्रावधान किया गया है कि यदि लोकसभा के 50 सदस्य यह सूचना देते हैं कि उनका सदन पर विश्वाश नहीं है तो अविश्वाश प्रस्ताव लाया जायेगा, चर्चा होगी उसके बाद मतदान होगा, यदि सरकार अपना बहुमत साबित नहीं कर पाती है और नई सरकार नहीं बन पाती है तो लोकसभा भंगकर दी जाती है। इससे लोकसभा के कार्यकाल में अस्थिरता उत्पन्न होती है। इस प्रावधान में संशोधन करके यह व्यवस्था किया जा सकता है कि इस प्रकार के अविश्वास वाले प्रस्ताव से नेता या सरकार में बदलाव हो लेकिन लोकसभा न भंग हो।

चौथा संशोधन दलबदल विरोधी कानून में यह किया जा सकता है कि जो किसी दल के दो तिहाई सदस्यों का एक साथ दल बदलना संभव बनाया गया है उसको भी समाप्त कर दिया जाना चाहिये। इसी क़ानून में लोकसभा अध्यक्ष को दल-बदल करने से होने वाले परिवर्तनों पर निर्णय लेने की समय-सीमा तय करनी चाहिये। यदि तीनो स्तर के चुनाव एक साथ कराने हों तो चुनाव आयोग और राज्य चुनाव आयोग के दायित्वों और शक्तियों में संशोधन करना पड़ेगा जोकि अनुच्छेद 324, 243K, 243ZA में दिये गये हैं। दूसरा प्रावधान यह भी करना पड़ेगा कि एक ही मतदान सूची बनाई जाये जिसे केंद्रीय चुनाव आयोग बनाये। जब भी सभी चुनाव एक साथ हों तब केंद्रीय चुनाव आयोग और राज्य चुनाव आयोग किस तरह से मिलकर कार्य करें गेइस सेसम्बंधितनियम-विनियम बना लिये जायें। जब भी एक साथ चुनाव करना होगा तो कुछ विधानसभाओं का कार्यकाल घटाना या बढ़ाना होगा, इसके लिये भी एक विशेष कानून बनाना पड़ेगा।

निष्कर्ष

एक राष्ट्र एक चुनाव विषय पर विस्तारपूर्वक अध्ययन करने के पश्चात निष्कर्ष के रूप में संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सामान्यतः एक राष्ट्र में एक साथ चुनाव कराया जाना एक अच्छा विचार है और ऐसा किया जाना संभव है। इससे देश में सम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद और भ्रष्टाचार में कमी आयेगी। जो भी अधिकारी- कर्मचारी, सेक्योरिटी फ़ोर्स अपना मूल कार्य छोड़कर चुनाव में लगी रहती है, वे सभी अपने मूलकार्य पर ज्यादा ध्यान दे पायेंगे। सरकारें विकास के कार्य या योजनाओं को सुचारु रूप से चला सकेंगी। ऐसा करते समय परिसंघवाद के आदर्शों का ध्यान रखा जाये ताकि राज्यों में भय न पैदा हो। यह सुधार करते समय बहुत जल्दबाजी न किया जाये।धीरे-धीरे चुनावों को एक साथ लाने का प्रयास किया जाना चाहिये। प्रसिद्द विधि शास्त्री सैविनी के लोक चेतना के सिद्धांत के अनुसार किसी भी देश की विधि वहां की जनता की चेतना में होती है। कोई भी देश जैसे-जैसे विकास करता है तो वहां के लोगों की मानसिक स्थिति भी विकसित होती है तदनुसार वहाँ की विधिक व्यवस्था भी परिवर्तित होती है। इस सिद्धांत को यदि चुनाव के सन्दर्भ में लागू किया जाये तो यह कहा जा सकता है कि अब भारत के मतदाताओं की मानसिक स्थिति इतनी विकसित हो चुकी है कि

वे वर्तमान चुनावी प्रक्रिया में व्यापक सुधार चाहते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

पाण्डेय, जे. एन. (2010). भारत का संविधान, इलाहाबाद लॉ एजेंसी पब्लिकेशन्स (चौदहवाँ संस्करण)

त्रिपाठी, टी. पी. (2011). विधिशास्त्र, इलाहाबाद लॉ एजेंसी पब्लिकेशन्स (द्वादश संस्करण)

ऑनलाइन स्त्रोत

https://www.lawyersclubindia.com/articles/details.asp?mod_id=8908
https://www.nextias.com/current-affairs/11-03-2022/one-nation-one-election
https://knowlaw.in/index.php/2021/04/26/one-nation-one-election/
https://www.youtube.com/watch?v=woOF4NoBoQc
https://www.jansatta.com/national/one-country-one-election-complete-agreement-will-made/1063602/